बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 12 अंक 60

डिजिटल भविष्य

कई मायनों में काफी निचले स्तर पर आ चुके और हकीकत से दूर के गलत आख्यानों को बढ़ावा देने के लिए याद रखे जाने लायक इस चुनावी मौसम में मोदी सरकार डिजिटल रूप से संबद्ध देश की दिशा में महत्त्वपूर्ण प्रगति का दावा कर सकती है। मैकिंजी ग्लोबल इंस्टीट्यूट की तरफ से तैयार रिपोर्ट 'डिजिटल इंडिया: टेक्नोलॉजी टू ट्रांसफॉर्म ए कनेक्टेड नेशन' में यह तथ्य उभरकर सामने आता है।

इंटरनेट उपभोक्ताओं की संख्या के लिहाज से भारत (56 करोड़) अब चीन के बाद दूसरे स्थान पर आ चुका है। वर्ष 2018 में भारत के स्मार्टफोन धारकों ने 12.3 अरब ऐप डाउनलोड किए थे। किसी भी देश की तुलना में सोशल मीडिया पर सबसे ज्यादा वक्त भारतीय ही बिताते हैं। इंडोनेशिया को छोड़कर किसी भी अन्य देश की तुलना में भारत सबसे तेजी से डिजिटल हो रहा है और अब भी इसके विस्तार की काफी गुंजाइश है। प्रति व्यक्ति आय के तुलनात्मक स्तर पर कोई भी देश इन पैमानों पर समान दायरे में नहीं दिखता है।

यह स्थिति किस वजह से आई है? अगर इसका संक्षिप्त जवाब दें तो आधार, जियो, जनधन और वस्तु एवं सेवा कर (जीएसटी) इसके लिए जिम्मेदार हैं। जीएसटी लागू होने के बाद 1.03 करोड़ कारोबारी इकाइयां कर-भुगतान के डिजिटल मंच पर आ चुकी हैं। मैकिंजी रिपोर्ट कुछ सुविदित तथ्यों का भी जिक्र करती है। मसलन, इंटरनेट डेटा की लागत वर्ष 2013 के बाद से 95 फीसदी कम हो चुकी है जबकि फिक्स्ड लाइन पर डाउनलोड की रफ्तार चौगुनी हो चुकी है। इसके चलते प्रति व्यक्ति मोबाइल डेटा उपभोग सालाना 152 फीसदी बढ़ चुका है। इसके अलावा अपेक्षाकृत गरीब राज्य भी संपन्न राज्यों के साथ डिजिटल खाई पाटने में लगे हुए हैं। अकेले उत्तर प्रदेश की ऑनलाइन आबादी करीब 3.6 करोड़ बढ़ी है। कस्बों एवं गांवों में रहने वाले बेहद सामान्य लोग भी अब ऑनलाइन प्लेटफॉर्म पर जाकर खबरें देखते हैं, दोस्तों से बात करते हैं, पैसों का लेनदेन करते हैं, फिल्में देखते हैं और खरीदारी करते हैं। इन सभी बातों को एक साथ रखकर देखें तो यह किसी कायाकल्प से कम नहीं है। मोदी सरकार को इस शब्द का इस्तेमाल कई मायनों में पसंद है।

नौकरियों समेत कई क्षेत्रों पर डिजिटलीकरण के वृहद-आर्थिक असर होते हैं। लेकिन रिपोर्ट में कहा गया है कि डिजिटल अर्थव्यवस्था में वर्ष 2025 तक 6-6.5 करोड़ रोजगार अवसर पैदा होंगे जो इसकी वजह से संकट में आए करीब 4-4.5 करोड़ नौकरियों से 2 करोड़ अधिक ही होगा। कृषि कार्यों में इस्तेमाल होने वाले उत्पादों का प्रभावी उपयोग होने से खेती की लागत 20 फीसदी तक कम हो सकती है और ऑनलाइन नेटवर्क पर अधिक मूल्य मिलने से कृषि आय 15 फीसदी तक बढ़ सकती है। फसल कटाई के अवशिष्ट में भी काफी कमी लाई जा सकती है। रखरखाव पर लागत जीडीपी की 14 फीसदी है जो अन्य देशों की तुलना में करीब दोगुनी है लेकिन ट्रकों की आवाजाही की प्रभावी निगरानी से इस अंतराल को पाटा जा सकता है। डिजिटल प्रौद्योगिकी के इस्तेमाल से स्वास्थ्य मंत्रालय के अलावा शिक्षा क्षेत्र को भी काफी फायदा हो सकता है। वास्तव में, डिजिटल तकनीक को अपनाने के मामले में बड़े एवं छोटे कारोबारों के बीच के फर्क को भी समय के साथ कम किया जा सकता है। जहां बड़ी कंपनियां कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई) और इंटरनेट ऑफ थिंग्स (आईओटी) का अधिक लाभ ले पाएंगी, वहीं कनेक्टिविटी बेहतर होने और डेटा की कीमतें कम होने से यह फासला भी कम होता जाएगा।

हालांकि इनमें से कोई भी स्थिति अपने-आप नहीं पैदा होगी। मैकिंजी का कहना है कि सरकारों, कारोबार जगत और आम लोगों को यह बदलाव आत्मसात करना होगा और डिजिटलीकरण की दिशा में आगे बढ़ने के सबसे अच्छे तरीके तलाशने होंगे। मसलन, भूमि रिकॉर्ड और कारोबारी पारदर्शिता के लिए प्रयास करने होंगे। डिजिटलीकरण की इस धारा के कुछ पहलू अच्छे नहीं हैं। इनमें विषाक्त सोशल मीडिया और निजता का ह्रास शामिल हैं। इस नई दुनिया के नियम इतनी सावधानी से बनाने होंगे कि कारोबार को बंदी के कगार पर पहुंचने और राजनीतिक इस्तेमाल से रोका जा सके और नागरिकों को हिंसा की गतिविधियों से सुरक्षित किया जा सके।

इसके लिए लागत को कम करने और लाभ को अधिकतम करने की जरूरत है। फिर भी यह संदेश एकदम साफ है कि डिजिटलीकरण की संभावनाएं अगर अपरिहार्य नहीं तो इतनी अधिक लाभप्रद हैं कि इस नई हकीकत के मुताबिक ढलने में जो भी अवरोध बनेगा वह पीछे छूट जाएगा।

साप्ताहिक मंथन

टी. एन. नाइनन

अजय मोहंती

वित्तीय क्षेत्र का नियमन हो विवेकसंपन्न

वित्तीय क्षेत्र में सूक्ष्म और समझदारी के साथ नियमन बहुत अधिक आवश्यक हो चला है। इस संबंध में विस्तार से दृष्टि डाल रहे हैं **अजय शाह**

इन दिनों हमें बैंकों, म्युचुअल फंड, गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियों (एनबीएफसी), बॉन्ड बाजार और अचल संपत्ति क्षेत्र में लगातार कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है। ये सारी कठिनाइयां आपस में जुड़ी हुई हैं। इनके घटक आपस में अलग-अलग नहीं हैं। ऐसे में एक बंद वित्तीय नियामक ढांचे के लिए सूचनाएं जुटाना, मूलभूत कारणों का विश्लेषण करना और समस्याओं को हल करना काफी कठिन होता है।

नियामकों में समस्याओं को टालने की स्वाभाविक प्रवृत्ति होती है। हमें एफआरडीआई विधेयक, वित्तीय डेटा प्रबंधन केंद्र (एफडीएमसी) और वित्तीय स्थिरता एवं विकास परिषद (एफएसडीसी) में तकनीकी सचिवालय की आवश्यकता है। इन तीन घटकों के अभाव में हमें एक अनौपचारिक टीम की आवश्यकता है जो इन संस्थानों के काम का स्वत: अनुकरण करे।

चीजों और परिस्थितियों को देखने के नजरिये में अंतर को लेकर निरंतर तनाव की स्थिति बनी रहती है। इन दोनों नजरिये से हालात एकदम अलग-अलग नजर आते हैं। बीते कुछ दिनों में इस बात की आवश्यकता स्पष्ट हुई है कि देश के वित्तीय क्षेत्र की आवश्यकताओं को समग्रता में देखा जाए।

सूक्ष्म और विवेकसंपन्न नियमन का काम है वित्तीय कंपनियों की विफलता की संभावनाओं को सीमित करना। उदाहरण के लिए हमारा लक्ष्य यह भी हो सकता है कि एक दशक में 2 फीसदी से अधिक बैंक विफल नहीं हों। मोटे तौर पर बात करें तो इसका यही अर्थ हुआ कि एक दशक में देश में दो बड़े बैंक नाकाम हो सकते हैं। सूक्ष्म-विवेकसंपन्न नियमन ऐसे नियम बना सकता है जो बैंकों को अतिरिक्त जोखिम उठाने से रोकते हों। ऐसा करने से किसी भी बैंक की विफल होने की आशंका एक दशक में 2 फीसदी से अधिक नहीं होगी।

म्युचुअल फंड के मामले में तो कंपनी के विफल होने की कोई आशंका नहीं है। सूक्ष्म विवेकी नियमन को लेकर सेबी की चिंता यह सुनिश्चित करने की है कि शुद्ध परिसंपत्ति मूल्य (एनएवी) के बारे में हमेशा सही जानकारी दी जाए और प्रतिदान के वादे हमेशा पूरे किए जाएं।

इन लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए सूक्ष्म विवेकसंपन्न नियमन, एक समय में किसी एक वित्तीय कंपनी के बारे में गंभीरतापूर्वक विचार करता है। नियामक को कारोबार की गहरी समझ होनी चाहिए और उसे ऐसे चुनिंदा हस्तक्षेप की भी जानकारी होनी चाहिए जो उसके लक्ष्य को हासिल करने में सहायक साबित हो। इस दौरान उत्पादों और प्रक्रियाओं के केंद्रीय नियोजन से बचा जाना चाहिए।

वित्तीय क्षेत्र में ऐसे सूक्ष्म और विवेकसंपन्न नियमन की आवश्यकता है। परंतु यह व्यवस्थित सोच से अलग है। हमें हाल के वर्षों की कुछ घटनाओं पर नजर डालनी चाहिए और यह देखना चाहिए कि वित्तीय तंत्र के विभिन्न घटकों ने किस तरह व्यवहार किया।

गैर वित्तीय कंपनियों (अधोसंरचना एवं अचल संपत्ति) में ऋण का तनाव 2008 में उभरा। अगर शुरुआती दौर में दिवालिया प्रक्रिया अपनाई जाए तो समस्या हल हो सकती है लेकिन अगर ऐसा नहीं किया गया तो कर्ज की राशि बढ़ती जाती है। कर्जदार के संकटग्रस्त होने के साथ ही पुराने कर्ज को चुकाने के लिए नए ऋण की आवश्यकता होती है। बैलेंस शीट बढ़ती जाती है और नए ऋण लेकर पुराने कर्ज चुकाए जाते हैं, इस प्रकार डिफॉल्ट को टाला जाता है। इससे यह सवाल उठता है कि आखिर नया कर्ज आ कहां से रहा है?

कई वर्ष तक बैंक और आरबीआई ने समस्या से निजात पाने की कोशिश की। बैंकों ने कमजोर कर्जदारों को और अधिक ऋण दिया। जब तक बैंक इस अत्यधिक ऋण वितरण को लेकर सचेत हुए तब तक म्युचुअल फंड, एनबीएफसी और बॉन्ड बाजार के रूप में एक नया फंडिंग चैनल तैयार हो गया था। बीते एक वर्ष से यह चैनल भी कठिनाई में नजर आ रहा है। अब हमारे पास कर्जदारों का एक ऐसा समूह है जिसके पास पुराना ऋण चुकाने और नया हासिल करने का कोई तरीका नहीं बचा है। हमारे वित्तीय तंत्र में चार तनावग्रस्त घटक हैं। इनमें से तीन फीडबैक लूप है जहां कर्जदारों, अचल संपत्ति मूल्यों, बॉन्ड बाजार, म्युचुअल फंड, एनबीएफसी और बैंकों की समस्याएं एक दूसरे पर दबाव बना रही हैं।

उपरोक्त दो पैराग्राफ व्यवस्थित सोच को दर्शाते हैं। हमें वित्तीय व्यवस्था को एक उच्चस्तरीय दृष्टिकोण से देखना होगा और इन दबावों और इनके आपसी रिश्ते पर भी नजर डालनी होगी।

सूक्ष्म विवेकसंपन्न स्टाफ दो वजह से ऐसा नहीं कर सकता। पहला सूक्ष्म विवेकसंपन्न नियामक का काम है किसी तय समय में फर्म की नाकामी का अनुमान लगाना। दूसरा, लक्षित दर से परे फर्म की नाकामी वास्तव में इस नियमन की नाकामी है। सूक्ष्म विवेकसंपन्न नियामक के मन में समस्याओं को छिपाने का पूर्वग्रह होता है।

इस सवाल का परीक्षण न्यायमूर्ति श्रीकृष्ण वित्तीय क्षेत्र विधायी सुधार आयोग (2011-2013) ने किया था। वित्तीय क्षेत्र में व्यवस्थित सोच मौद्रिक नीति के साथ तालमेल वाली नहीं है क्योंकि यह प्राथमिक रूप से वृहद अर्थव्यवस्था से संबंधित है। यानी कम और स्थिर मुद्रास्फीति से। वित्तीय क्षेत्र का व्यवस्थित सोच क्षेत्रवार वृहद विवेकसंपन्न नियामकों की सोच से मेल नहीं खाता। उनका ध्यान एक समय में एक फर्म पर रहता है और उनके मन में कठिनाइयों को स्वीकार न करने का एक किस्म का पूर्वग्रह भी रहता है।

इसके चलते एफएसडीसी के रूप में एक परिषद का गठन हुआ। इस परिषद में वित्तीय नियामकों के विभिन्न चेयरमैन और वित्त मंत्री शामिल होंगे और इसे एक तकनीकी सचिवालय का समर्थन हासिल होगा। इसे व्यवस्थित सोच में विशेषज्ञता हासिल होगी। इसके पास एफडीएमसी के रूप में विस्तृत डेटाबेस भी होगा। इसके अलावा वित्तीय कंपनियों की दिवालिया प्रक्रिया के बारे में भी एक विचार था जिसे निस्तारण निगम को अंजाम देना है। इसे एफआरडीआई विधेयक में स्थान दिया गया है। गैर वित्तीय कंपनियों के लिए यह काम आईबीसी को करना है। आईबीसी के रूप में अब हमारे पास इन चार घटकों में से एक है। हाल के वर्षों में अगर हमारे पास अन्य उपाय होते तो हालात शायद अधिक बेहतर होते।

जब हम पलटकर 2000-2001 के वित्तीय संकट की ओर देखते हैं तो उसके प्रमुख कारक थे यूटीआई, बीएसई और कलकत्ता स्टॉक एक्सचेंज। उस वक्त एफएसडीसी या एफडीएमसी कहीं तस्वीर में भी नहीं थे। वित्तीय फर्म के निस्तारण के लिए एफआरडीआई विधेयक की आवश्यकता भविष्य की बात थी। यही कारण है कि संकट से निपटने के लिए वित्त मंत्रालय द्वारा गठित एक अनौपचारिक टीम की सहायता ली गई। इसमें एफएसडीसी, एफडीएमसी और आरसी के कुछ तत्त्व शामिल थे।

ऐसा रुख मौजूदा संदर्भ में भी कामयाब हो सकता है क्योंकि एफएसडीसी, एफडीएमसी और आरसी के निर्माण के लिए कम से कम तीन वर्ष का समय चाहिए। इस समय आईबीसी के रूप में एक ऐसी सहायता उपलब्ध है जो पहले नहीं थी। कंपनियों को आईबीसी की प्रक्रिया से जल्द से जल्द गुजारना और कर्जदाताओं को निस्तारण और नकदीकरण के बीच चयन के लिए कहना एक अहम उपाय है जो अब उपलब्ध है।

भारतीय मीडिया की कैसे सुधारी जा सकती है छवि

मीडिया मंत्र

वनिता कोहली-खांडेकर

बीते दो वर्ष से समाचार मीडिया अपना काम भलीभांति नहीं कर रहा है। वह एकतरफा खबरें देता है, गलत रिपोर्टिंग करता है और बहस में केवल चीख-चिल्लाहट होती है। खबर गायब रहती है। इसके बावजूद ज्यादा से ज्यादा लोग उसकी ओर आकर्षित हो रहे हैं

क्या चीजें और बिगड़ सकती हैं? गत रविवार को जब श्रीलंका के होटलों और चर्च में विस्फोट की खबरें आईं तो भारतीय राजनेताओं ने सबसे पहले इसका फायदा आम चुनाव में उठाने की कोशिश की। इसके बाद भारतीय समाचार माध्यमों ने कुछ लोगों को इसके लिए जिम्मेदार ठहराना भी शुरू कर दिया जबकि श्रीलंकाई पुलिस अभी जांच में ही लगी थी। सोमवार तक श्रीलंकाई मीडिया और वहां के नागरिक हमारे राजनेताओं, मीडिया और ट्रोलों पर लानत भेजने लगे। ऐसा कई घटनाओं के साथ हो चुका है। उदाहरण के लिए इस वर्ष मार्च में न्यूजीलैंड में एक मस्जिद में हुए विस्फोट में मुस्लिमों के मारे जाने पर भारतीय ट्रोल काफी प्रसन्न थे।

दुनिया भर में भारतीयों को सीखने, लोकतंत्र के सम्मान और बढ़ती अर्थव्यवस्था का वाहक होने के कारण मान-सम्मान मिलता है। भारत के लोगों को ऐसी बौद्धिक क्षमता से संपन्न माना जाता है जो दुनिया भर में आईटी, शिक्षण जगत और दुनिया की कुछ शीर्ष कंपनियों के प्रबंधन में अपना लोहा मनवा रहे हैं। हालांकि बीते कुछ वर्ष के दौरान यह छवि काफी हद तक धूमिल हुई है। समाचार चैनलों, अखबारों और सोशल मीडिया से भारतीयों की छवि उन्मादी, युद्ध चाहने वाले लोगों की बन रही है जिन्हें हर उस व्यक्ति के खिलाफ जुबानी और शारीरिक हिंसा पसंद है, जो उन्हें पसंद नहीं है।

मीडिया को दोष देना बहुत आसान है। खासतौर पर टेलीविजन को। समाचार मीडिया वह बौद्धिक खुराक है जो हमारी दलीलों, बहसों और निर्णयों को प्रभावित करती है। हम इनके जरिये तय करते हैं कि किसे वोट देना है। परंतु बीते दो वर्ष से समाचार मीडिया अपना काम भलीभांति नहीं कर रहा है। वह एकतरफा खबरें देता है, गलत रिपोर्टिंग करता है और बहस में केवल चीख-चिल्लाहट होती है। खबर गायब रहती है। विज्ञान, प्रौद्योगिकी, कारोबार और सामाजिक बदलाव पर टेलीविजन समाचार चैनलों का ध्यान ही नहीं है। इसके बावजूद ज्यादा से ज्यादा लोग उसकी ओर आकर्षित हो रहे हैं। टेलीविजन पर समाचार दर्शकों की संख्या 2018 में बढ़कर 7.2 फीसदी हो गई, जो 2015 में 6.5 फीसदी थी। ये आंकड़े ब्रॉडकास्ट ऑडियंस रिसर्च काउंसिल के हैं।

व्हाट्सऐप पर खबरों के प्रचार-प्रसार ने हालात और अधिक खराब कर दिए। वहां खबरें गढ़ी जाती हैं, गलत बातों को खबर के रूप में तैयार किया जाता है और इनके माध्यम से कम पढ़े लिखे लोगों को निशाना बनाया जाता है। यही कारण है कि आज समाज का एक बड़ा हिस्सा यह यकीन करता है कि पंडित जवाहर लाल नेहरू के नाम से जो भी कचरा परोसा जा रहा है, वह सब स्वयं उन्होंने बोला था। इस प्रभाव को खत्म न सही लेकिन निष्क्रिय करने के चार तरीके हैं।

पहला, देश के 400 समाचार चैनल अपनी फंडिंग के स्रोत उजागर करें। वे अपने अंशधारकों, मुनाफे, लॉस अकाउंट और बैलेंस शीट की पूरी जानकारी हर तिमाही दें। लाइसेंस देने के लिए इन बातों को पूर्व शर्त बना देना चाहिए। देश के आधे से अधिक समाचार चैनलों का मालिकाना हक राजनेताओं, बिल्डरों या ऐसे लोगों के पास है जो किसी न किसी प्रकार प्रभाव का इस्तेमाल करते हैं और ईमानदारी से पैसे नहीं कमाते। न ही उनका इरादा पत्रकारिता की सेवा करने का होता है। ऐसा करने से फर्जी कारोबारी बाहर हो जाएंगे या उन पर निगाह रखी जा सकेगी।

दूसरा, सरकारी नियंत्रण से मुक्त एक मीडिया नियामक बनाया जाए। यह उन सभी संस्थाओं के विलय से बनाया जाए, जो इस समय 'स्व-नियमन' को अपना रही हैं। इस कदम को सफल बनाने के लिए जरूरी है कि यह नियामक सरकारी नियंत्रण से मुक्त हो। यह ब्रिटिश संचार उद्योग के नियामक एवं प्रतिस्पर्धी प्राधिकरण ऑफकॉम जैसा होना चाहिए।

तीसरा, दूरदर्शन को स्वतंत्र बनाएं। इस समय यह 'स्वायत्त' प्रसार भारती का हिस्सा है। हालांकि यह सामग्री तैयार करने, नियुक्तियों, वितरण या अपने तरीके से पैसा खर्च करने में स्वतंत्र नहीं है। इनमें से ज्यादातर चीजों पर अब भी केंद्र सरकार का नियंत्रण है। अगर डीडी सही मायनों में स्वायत्त होता तो यह अपने आप समाचार बाजार की शक्ल बदल देता।

ब्रिटेन में समाचार एवं मनोरंजन क्षेत्र में बीबीसी, चैनल 4 और आईटीवी समेत पांच सार्वजनिक प्रसारक हैं। सभी विश्वस्तरीय हैं। प्रतिस्पर्धी लगातार यह शिकायत कर रहे हैं कि उन्हें कैसे सब्सिडी दी जा रही है। निश्चित रूप से वे सरकारी धन से चल रहे हैं, लेकिन इसे बेहतर तरीके से खर्च किया जा रहा है। इन पांचों प्रसारकों ने समाचारों और मनोरंजन का एक ऐसा तंत्र तैयार किया है, जिससे निजी प्रसारक भी खुद में सुधार करने के लिए प्रयास कर रहे हैं। भारत में ऐसा कोई बेंचमार्क नहीं है।

आखिर में क्या हम भारतीय सभ्यता से ऑनलाइन सहमत या असहमत हो सकते हैं, हमारे पास आने वाले प्रत्येक अग्रेषित संदेश और भ्रामक इतिहास तथा तथ्यों को लेकर सवाल उठा सकते हैं। क्या हम उन शोर-शराबे वाले समाचार चैनलों को नहीं देखने का फैसला ले सकते हैं, जो हमें बांटते हैं? इससे स्थितियों को थोड़ा बेहतर बनाने में मदद मिलेगी और उम्मीद है कि हम फिर से वे भारतीय बन जाएंगे, जिनका पूरा विश्व सम्मान करता है।

कानाफूसी

संदेह का पटाक्षेप

अगर लोकसभा चुनाव के बाद समाजवादी पार्टी और बहुजन समाज पार्टी गठबंधन की स्थिरता पर किसी को कोई संदेह था तो गुरुवार को डिंपल यादव ने सुनिश्चित किया कि इन सभी सवालों को समाप्त कर दिया जाए। कन्नौज लोकसभा सीट से समाजवादी पार्टी की उम्मीदवार और पार्टी अध्यक्ष अखिलेश यादव की पत्नी डिंपल ने लोकसभा क्षेत्र में हो रही एक रैली के दौरान लोगों को संबोधित करने से पहले मंच पर आसीन बसपा सुप्रीमो मायावती के पांव छूकर आशीर्वाद लिया। डिंपल को 2014 के लोकसभा चुनाव में इस सीट से जीत मिली थी। हालांकि इस तरह के कुछ संदेहों का पटाक्षेप उस समय हो गया था जब मायावती और पूर्व सपा प्रमुख मुलायम सिंह यादव ने करीब दो दशक के बाद पिछले सप्ताह मंच साझा किया था।

रॉयल चैलेंजर्स और 'डिंडा अकादमी'

आईपीएल के इस सीजन में रॉयल चैलेंजर्स बेंगलूरु (आरसीबी) टीम का अब तक का प्रदर्शन ज्यादा अच्छा नहीं रहा और इसके गेंदबाज सोशल मीडिया पर ट्रोलिंग का शिकार हो रहे हैं। कुछ सोशल मीडिया उपयोगकर्ताओं ने मोहम्मद सिराज और उमेश यादव समेत आरसीबी के कुछ गेंदबाजों को 'डिंडा अकादमी' का छात्र बताया। इसका संदर्भ पूर्व भारतीय और आरसीबी के तेज गेंदबाज अशोक डिंडा से था जो अपनी गेंदबाजी में काफी अधिक रन देते थे। हालांकि बुधवार को उमेश यादव की बेहतर गेंदबाजी के कारण आरसीबी ने किंग्स इलेवन पंजाब से जीत दर्ज की। जीत के बाद सोशल मीडिया ट्रोलरों पर व्यंग्य करने का अवसर देखते हुए आरसीबी ने ट्वीट किया, 'डिंडा अकादमी? यह क्या होती है?'। हालांकि इसे बाद में हटा लिया गया लेकिन इसके स्क्रीनशॉट ले लिए गए थे और फिर सोशल मीडिया पर इन अटकलों का दौर चलने लगा कि इस ट्वीट को करने के पीछे और हटाने में किसका हाथ हो सकता है।

आपका पक्ष

मजदूरों के उत्थान पर हो ध्यान

देश में निर्माण कार्यों जैसे भवन, सड़क, और पुल बनाने, रेलवे बिजली का उत्पादन, बांध, नहर, जलाशय, खुदाई, जल पाइप लाइन और केबल बिछाने जैसे कार्य करने वाले मजदूरों को निर्माण मजदूर कहते हैं। आंकड़ों के मुताबिक साल 1983 से 2011-12 तक देश लगभग 5 करोड़ निर्माण मजदूर थे। भवन या अन्य निर्माण मजदूरों व अन्य ट्रेड यूनियनों के एक लंबे संघर्ष के बाद इन कामगारों के काम के दौरान व परिवार की आर्थिक व सामाजिक सुरक्षा को ध्यान में रखते हुए 1996 में निर्माण श्रमिक अधिनियम पारित हुआ जिसके तहत इन मजदूरों के कल्याण के लिए एक बोर्ड का गठन किया जाना सुनिश्चित किया गया था। हालांकि बहुत पहले से राज्य और केंद्र सरकारों द्वारा इन निर्माण मजदूरों की अनदेखी की गई। इंडिया स्पेंड की एक ताजा रिपोर्ट के मुताबिक निर्माण के काम में लगे मजदूरों की भलाई के नाम पर 1996 से अब तक 36,685 करोड़ रुपये जारी किए गए लेकिन पिछले 23 सालों में इसका केवल 25.8 प्रतिशत ही (9,967.61 करोड़ रुपये) इनपर खर्च किया गया। कई बार सरकारें लोकलुभावन योजनाएं शुरू तो कर देती हैं लेकिन बाद में उनका कभी लेखांकन नहीं होता। राज्य सरकारों के कल्याणकारी बोर्ड से मजदूरों को कई सहूलियतें दी जाती हैं लेकिन इनमें से अधिकांश को लेकर शिकायतें आती रहती हैं। राज्य और केंद्र सरकारों को असंगठित क्षेत्र के मजदूरों के कल्याण के लिए अभी कई कारगर कदम उठाने होंगे जिससे देश के आर्थिक विकास में एकरूपता आ सके।

प्रियंबदा, गोरखपुर

देश में आर्थिक समानता के लिए मजदूरों के कल्याण के लिए गंभीर प्रयास किए जाने चाहिए

विमानन संकट का समाधान

देश में अधिकांश विमानन कंपनियां कई तरह की चुनौतियों से जूझ रही हैं। हाल ही में जेट एयरवेज को अपना परिचालन बंद करना पड़ा जिससे बहुत से कर्मचारियों को नौकरी और जीवनयापन का संकट हो गया है। कर्मचारी सड़कों पर प्रदर्शन कर रहे हैं। इसी तरह सरकारी क्षेत्र की विमानन कंपनी एयर इंडिया के संकट का समाधान अभी तक नहीं हो सका। दूसरी विमानन कंपनियां भी नौकरियों में कमी कर रही हैं। दरअसल इसके लिए काफी हद तक कंपनियां ही जिम्मेदार हैं। वे अपनी वित्तीय स्थित देखे बिना ग्राहकों के लिए लगातार विभिन्न तरह की छूट देती रहती हैं जिससे कंपनियों को आर्थिक घाटा उठाना पड़ता है। इन समस्याओं के समाधान के लिए केंद्र सरकार और विमानन कंपनियों को एक साथ मिलकर बातचीत करनी चाहिए और सार्वजनिक परामर्श लेते हुए दीर्घावधि की रणनीति पर काम करना चाहिए।

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिजनेस स्टैंडर्ड लिमिटेड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली - 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in उस जगह का उल्लेख अवश्य करें, जहां से आप ईमेल कर रहे हैं।